पंचम अध्याय

1- प्राण और वैज्ञानिक एनर्जी

2- प्राण और परमाणु

3- न्यूक्लियस, एलेक्ट्रोंस, प्रोटोंस आदि

4- प्राण और अन्तरिक्ष

5- विद्युत्, मारुतरश्मि, सौररश्मि

6- गृहों में प्राण की सत्ता ।

=====

पंचम अध्याय

प्राण और वैज्ञानिक एनर्जी

वैज्ञानिक विकास में विज्ञान वेत्ताओं को मैटर के अन्दर छिपी हुई एनर्जी का पता चला । मैटर गतिहीन है एनर्जी उसे गति प्रदान करती है । विकास के क्रम में वैज्ञानिकों ने यह भी देखा है कि मैटर को एनर्जी में परिणत किया जा सकता है और एनर्जी को मैटर में । आगे चलकर मैटर को परमाणुओं का समूह माना गया, पर जब परमाणुओं का विस्फोट किया गया तो उसमें गति के चक्र पर चक्र प्रतीत होने लगे । इस समय वैज्ञानिक शक्ति अणु के विस्फोट से विश्वभर में प्रलय का दृश्य उपस्थित कर सकती है । जापान के दो नगर हिरोशिमा और नागासाकी अणु विस्फोट से उत्पन्न प्रलय के आखेट बन चुके हैं, जो विषाक्त वातावरण अणु बम के विस्फोट से बना, वह छः महीने तक अपना प्रभाव दिखाता रहा । अतः मैटर और एनर्जी को एक दूसरे से पृथक् करना असंभव सिद्ध हो चुका है । हमारे शास्त्रों ने एनर्जी को गति या डायनेमिक और मैटर को सत्ता रखने वाला कहा है । वेद में इनके नाम ऋतु और सतु हैं, प्रश्नोपनिषद् में इनको प्राण और रयि कहा गया है । एक एक शरीर में जहाँ प्राण की क्रिया चल रही है वहाँ शरीर की सत्ता भी विद्यमान है । प्राण के बिना शरीर अपनी सत्ता नहीं रख सकता । ब्रह्माण्ड में प्राणों का प्राण सूर्य है, उसे प्राणों का भण्डार कहा जा सकता है । सूर्यमण्डल में प्राण प्रदाता वही है, सूर्य न हो तो कोई भी ग्रह जीवित नहीं रह सकता । सूर्य एक नहीं अनेक हैं, सौर्यमण्डल भी इसी आधार पर अनेक हैं । और सर्वत्र मैटर और एनर्जी ऋतु और सतु अथवा प्राण और रयि का खेल हो रहा है । चर-अचर सबमें इन्हीं दोनों शक्तियों की माया कार्य कर रही है । विज्ञान ने प्राण के महत्व को स्थान दिया है और इस दिशा में आधुनिक वैज्ञानिकों की खोज सराहनीय है ।[1]

1.-वेदार्थ चन्द्रिका-आचार्य मुंशीराम शर्मा, पृ० 82

सर जेम्स अपने ग्रन्थ "दी यूनीवर्स एराउन्ड अस" में कहते हैं- मनुष्य अपने को तभी समझ सकता है जब वह पहले इस ब्रह्माण्ड का ज्ञानप्राप्त करे, जिससे उसे अपने सभी इन्द्रियों गोचर उपलब्ध होते हैं ।"

सर जेम्स के मत में शक्ति कई रूपों में विद्यमान रह सकती है । इसका विनाश कभी नहीं होता, पर यह एक रूप से दूसरे रूप में निरन्तर परिवर्तित होती रहती है ।इनके अनुसार शक्ति का रूप मौलीक्यूल्स के रूप में इस प्रकार वर्णित हुआ है " जब हम कक्ष की वायु कोउष्ण करते हैं तब हम वस्तुत: उसके मौलीक्यूल्स (Molecules) को तीव्र एवं द्रुत गति प्रदान कर देते हैं । इस प्रकार अग्नि की समग्रता उन मौलिक्यूल्स की शक्ति की समग्रता होती है । एक मौलीक्यूल्स अनेक अणुओं से मिलकर बनता है । ये अणु अब तोड़े जा सकती है और तोड़े जाने पर अपार शक्ति के भण्डार सिद्ध हो चुके हैं । इनकी बनावट सौर जगत् के सदृश है जिसमें न्यूक्लीयस (Nucleus) सूर्य है और उसके चतुर्दिक् एक सेकेण्ड में शतश: मील की गति से चलने वाले एनेक्ट्रोन्स (Electrons) ग्रहों की भाति है ।

हमें इस शक्ति को केवल मात्रा के रूप में ही नहीं अपितु गुण के रूप में भी समझना चाहिए । शक्ति की मात्रा सदैव समान रहती है । यह थर्मोडाइनेमिक्स धन ऋणवाद या पूर्तिवाद का प्रथम नियम है ।

शक्ति का गुण परिवर्तित होता है - उसकी प्रवृत्ति ही यह है और वह एक ही दिशा में परिवर्तित होने की प्रवृत्ति रखती है । मनुष्य इधर उधर गति कर सकता है । पर प्रकृति ऐसा नहीं करती यह नियम में आबद्ध है, उस नियम का अतिक्रमण नहीं कर सकती । शक्ति का गुण भी अपनी निश्चित गति से चलता है यह थर्मोडाइनेमिक्स का दूसरा नियम है ।

सर आर्थर एडिंग्टन अपने ग्रन्थ " दी एक्सपैन्डिंग यूनीवर्स" में लिखते हैं । अघमर्षण सूक्त भी सृष्टि के मूल में इन ही दो तत्वों को स्वीकार करता है ।

सर जेम्स, जीन्स अपने ग्रन्थ " दी मिस्टीरियस यूनीवर्स" पर कास्मिक (cosmic) रेडियेशन (Radiation) की किरणों को ~~द्रव्यों की~~ द्यौ या ऋतु का रूप देता हैं। मैटर की वह विशाल मात्रा में विध्वंस होता अनुभव करता है। इसी को वायुपुराण ने अव्यक्त कहा था। सर जेम्स जीन्स के अनुसार मैटर एकदम नष्ट नहीं होता है, प्रत्युत वह रेडियेशन में रूपान्तरित हो जाता है। प्रकृति की मूलावस्था को इसी लिए देवगोपापूरिन नाम दिया गया है। प्रकृति का नाम, या आर नहीं अपितु मैटर परिवर्तित होता है। महाभूतों की अवस्था बदलती है, वे अपने गुणों पंचतन्मात्राओं में पन्चतन्मात्रा अहंकार में, अहंकार महत्तत्त्व या रेडियेशन में और महत्तत्त्व मूल प्रकृति में सांख्य के अनुसार लीन होते रहते हैं, विकृति के आने पर क्रम उलट जाता है।

सर जेम्स जीन्स के कथन का अभिप्राय है कि मैटर द्यौ से पार्थिवता, और पार्थिवता से द्यौ में परिणत होता रहता है। द्यौ में तत्व की प्रधानता है, जिसकी गति विद्युत को सी है, परन्तु पृथ्वी तत्त्व में तम प्रधान है जिसकी गति बहुत मंद है। गुणों में साम्य तथा वैषम्य आता है। गुणों का साम्य प्रलय की ओर तथा वैषम्य विकृति की ओर ले जाता है। विकृति को हम द्यौ से पार्थिवता की ओर आना यदि कह सके तो प्रलय की पार्थिवता से द्यौ की ओर चलना कहा जायेगा।

थियरीज आफ दी यूनीवर्स[1] में एक लेख गैमों का है जिसमें ब्रह्माण्ड के विकास पर प्रकाश डाला गया है। लेखक के अनुसार प्रारंभ में ऊष्ण गैस थी जो धीरे धीरे नक्षत्र या तारिकाओं में तारिकायें तारिका समूहों (गेलेक्सीज) में और तारिका समूह ठोस द्रव्य (मैटर) में परिणत हुये। ठोस द्रव्य के प्रतिनिधि हैं। प्रोटोन्स (Protons) न्यूट्रोन्स (neutrons) तथा एलेक्ट्रोंस रेडियेशन जो पहले ऊष्ण गैस में और फिर तारिकाओं में परिलक्षित हुआ का प्रतिनिधित्व प्रकाश करता है। ऊष्ण गैस में प्रोटोन्स या प्रकाशाणु थे जो लघु श्वेत से वृत्तों दीर्घ श्वेतवृत्तों तथा कृष्णवृत्रों में क्रमशः परिणति हुए। इन अणुओं के एकत्रीकरण से बड़े बड़े अणु बने। एक प्रोटोन धमाणु तथा एक न्यूट्रोन (ऋमाणु) से ड्यूटेरियम (Deuterium) एक द्वयणुण बना। दो दो से मिलकर एक हेलियम बना। लगभग

1- थियरीज आफ दी यूनीवर्स-मिल्टन केम्ब्रिज

250 मिलीयन वर्षों के पश्चात् वह प्रारंभिक गैस खण्ड खण्ड होकर विशाल प्रकाश पिण्डों में ॥प्रोटोगेक्सीज॥ में परिवर्तित हो गई । उन पिण्डों से स्फुलिंगों की भांति टूटकर नक्षत्र तथा ग्रह बने । पृथ्वी की स्थिति में प्रकाश का अभाव है यह सबके पश्चात् बनी । प्रारंभ में तेज की मात्रा अधिक थी, पार्थिवता कम थी, पार्थिवता में अवतरण हुआ है, उत्क्रमण नहीं ।

वैज्ञानिक जिन्हें रेडियेशनऔर अर्थ ॥Earth॥ का नाम देते हैं, उन्हें हम सौराग्नि और पार्थिव अग्नि कह सकते हैं । अघमर्षण सूक्त के अनुसार यही ऋत् और सत् है । सौराग्नि के बाह्य पर्तपर तप्त ज्वाला समूह है परन्तु पृथ्वी के अन्दर अग्नि है । यही दोनों अवस्थायें अग्नि और सोम अथवा प्राण और रयि भी कही जाती है । पार्थिव तत्व अपने सजातीय तत्व को ही आकर्षित करता है । सौर तत्व सबको आकर्षित करता है । सूर्य की किरणें समस्त सौर परिवार के ग्रहों पिण्डों को लाभ पहुँचाती हैं और जगत् की परिधि इतनी विस्तृत है कि हमें अपने सामान्य ज्ञान मे उसका अनुमान भी नहीं कर सकते ।

सभी दर्शन तथा विज्ञान इस जगत् को गतिशील कहते हैं । गतिमान् होने से ही इस संसार को जगत् कहा जाता है ।गतिशील होने से ही इस जगत् का प्रत्येक परमाणु परिवर्तनशील है परन्तु इस जगत् का एक स्थिर बिन्दु भी मानना पड़ता है कि जिसमें गति केन्द्र कहा जा सके । ऐसे केन्द्र को स्थिर बिन्दु कहा गया है । इसी स्थिर बिन्दु को ब्रह्म अथवा शक्ति कहा जाता है । वैज्ञानिक इसी स्थिर बिन्दु को स्थिति ऊर्जा कहते हैं । वास्तव में इस परिवर्तनशील जगत् में स्थिर बिन्दु में भी कोई तात्त्विक भेद नहीं है । भेद केवल इतना है कि एक अपने शुद्ध रूप में ॥स्थिर बिन्दु रूप में॥ है और दूसरा विकृत रूप में॥ जगत् रूप में॥ यदि जगत् के विकृत रूप को विशुद्ध रूप में परिणत कर दियाजाये तो केवल एक शुद्ध, शान्त , एकरस रूप ही शेष रह जाता है । आज का भौतिक विज्ञान भी यही कहता है कि एक ही ऊर्जा शक्ति क्रियाशील अवस्था में जगत् नाम और रूप में प्रतीत होती है और वह भी निष्क्रिय अवस्था में स्थिति ऊर्जा हो जाती है ।

भौतिक विज्ञान के अनुसार ऊर्जा इस विश्व में एक महान् तथा सर्वव्यापक शक्ति है । दर्शन शास्त्र में इसी ऊर्जा को आद्य शक्ति कहा गया है। ऊर्जा के दो रूप हैं एक स्थितिज निष्क्रिय दूसरा गतिज क्रियात्मक ।

ऊर्जा और द्रव्य वस्तु दोनों एक ही परमसत्ता के दो रूप हैं, एक अमूर्त और दूसरा मूर्त । अमूर्त को ऊर्जा कहते हैं । अमूर्त को द्रव्य । ऊर्जा का ठोस रूप द्रव्य है और द्रव्य का अति सूक्ष्म रूप ही ऊर्जा है । ऊर्जा को द्रव्य में द्रव्य को ऊर्जा में परिवर्तित किया जा सकता है अथवा प्राकृतिक नियमों के अनुसार स्थूल से सूक्ष्म और सूक्ष्म से स्थूल परिवर्तन क्रिया स्वाभाविक है तथा सदैव चलती रहती है । इसी प्रकार दर्शनशास्त्र का भी यह सिद्धान्त है कि ब्रह्म से ब्रह्माण्ड का आविर्भाव होता है तथा ब्रह्माण्ड पुनः ब्रह्म में विलीन होता है । ऊष्मा प्रकाश, ध्वनि चुम्बक, विद्युत आदि सब एक ही ऊर्जा के विभिन्न रूप हैं ।

ऊर्जा स्वयं एक स्वतंत्र तत्व है । यह न कभी उत्पन्न होती है और न कभी इसका नाश ही होता है और न कभी यह किसी अन्य तत्व का गुण ही है । आकाश का गुण शब्द है परन्तु "शब्द" ऊर्जा एक स्वतंत्र तत्व है । इसी प्रकार ऊष्णता ऊर्जा अग्नि की भी जननी है अर्थात् एक स्वतंत्र तत्व है यह ऊर्जा की वैज्ञानिक परिभाषा है ।

वैज्ञानिक सूर्य से आने वाली ऊर्जा को परमाणु ऊर्जा कहते हैं जो स्थानान्तरण के लिए किसी भौतिक माध्यम की अपेक्षा नहीं करती तथा एक वैकल्पिक आकाश जिसको वैज्ञानिक "ईथर" कहते हैं । इसी ईथर के माध्यम से सूर्य ऊर्जा का स्थानान्तरण माना जाता है । इसी परमाणु तथा सूर्य ऊर्जा को दार्शनिक भाषा में प्राण शक्ति कहा गया है । यह प्राणशक्ति भी स्थानान्तरण के लिए किसी माध्यम की अपेक्षा नहीं रखती। यह प्राण शक्ति भी चैतन्य आकाश अर्थात् चिदाकाश में स्वयं गतिशील होती है । प्रत्येक वस्तु जिन तत्वों अथवा परमाणुओं से बनी है उसका प्रत्येक परमाणु समान संख्या के इलेक्टानों और प्रोटनों से निर्मित है जो सदैव एक दूसरे

को अपनी ओर आकर्षित करते रहते हैं । अतः स्पष्ट है कि वस्तु अथवा द्रव्य की विद्युतीय प्रकृति है, इसलिये सृष्टि का निर्माण विद्युत् से प्राण से अथवा ऊर्जा से हुआ, स्वतः सिद्ध है । भिन्न भिन्न तत्वों को परमाणुओं में इलेक्टोनों तथा प्रोटानों की भिन्न भिन्न संख्या होने से उनके गुण भी भिन्न भिन्न होते हैं परन्तु प्रत्येक तत्व के इलेक्टोनों में भार, आवेश तथा मात्रा समान होती है । इसी प्रकार शक्ति तत्व एक ही है परन्तु वह शक्ति विभिन्न कलाओं से प्रकट होकर बहुसंख्या में बहुनाम रूप धारण करती है ।

======

(न्युक्लियस एलेक्ट्रोन्स, प्रोटोन्स आदि)

अणु विश्लेषण में जो ऊर्जा दिखाई दी है क्या वही प्राण है ? यदि है तो कहना पड़ेगा कि प्राण परमाणु के भीतर छिपा पड़ा है। ऋषियों की मान्यता के अनुसार रयि और प्राण का जोड़ा है। मैटर परमाणुओं का संघात है। इस संघात में जो गति और प्रगति का आवर्त्त है और जो ब्रह्माण्डीय गति में शक्ति है वह प्राण का ही रूप माना जायेगा। प्रश्न उठता है कि यदि गति का कारण प्राण है तो ऊर्जा जहाँ जो गति की समानता दिखाई दे रही है, उसका आधार क्या है ? सूर्य की गति नियत है, इसी प्रकार पृथ्वी आदि सब ग्रहों की गति नियत है। गति के साथ परिक्रमा का प्रवेश भी नियत है, कोई भी ग्रह दूसरे ग्रह की कक्षा का अतिक्रमण नहीं करता। कभी कभी ग्रह एक राशि पर एकत्र भीहो जाते हैं, परन्तु रहते पृथक् पृथक् ही हैं। कौन है वह सत्ता जो इस गति चक्र के संतुलन को भग्न नहीं होने देती ? वैज्ञानिकों ने दूरबीन से अनेक सूर्यों के दर्शन किये हैं, अनेक नवीन ग्रहों का पता लगाया है। पर गति से अनेक व्यतिक्रम कहीं भी अनुभव नहीं किया। अनेक सूर्यों को घुमाने वाला कौन है ? यही नहीं इन सूर्यों में ऊर्जा जिसे हम प्राण शक्ति कहते हैं, प्राण से निरन्तर आती रहती है। सूर्य बुझ क्यों नहीं जाता ? उसमें अग्नि क्यों धधकती रहती है ? हमारे ऋषि कहते हैं कि इसका कारण सूर्य से ऊपर महालोक से आती हुई आपो-धारायें हैं। वेद में इन आपोधाराओं को कवियों की संज्ञा दी गई है और लिखा है कि-" सहस्त्रा: अणीधा कवय: ये गोपयान्ति सूर्यम्" अर्थात् सूर्य की ऊर्जा का कारण कविसंज्ञक सहस्त्रों धाराओं की रक्षिका यही आपोधारायें हैं। मार्गदर्शक वस्तु को भीकवि कहा गया है जैसे सूर्य की किरणों में मंत्र ध्वनि गूँज रही है। वैसी ही मन्त्र ध्वनि वस्तु की आपोधाराओं में गूँज रही है। इस प्रकार सूर्य की ऊर्जा का कारण ऊपर से आती हुई आपोधारायें हैं।

प्रश्न उठता है कि इन आपोधाराओं का कारण कौन है ? प्रश्न पर प्रश्न उठते रहेंगे समाधान अन्त में एक ही तथ्य को ग्रहण करने से होगा और वह तथ्य है प्राण और परमाणु, ऋतु और सत् अथवा गति औरअस्तित्व दोनों के मूल में विद्यमान परतत्व गति समानता का स्रोत एक ही है । प्राण और परमाणु दोनों को ब्रह्माण्ड की विविधता में अभिव्यक्ति देने वाला और उसे अपने में विलीन करने वाला, वही एक तत्व है जिसे परतत्व कहिए अथवा ब्रह्म कहिए या अक्षर "ओइम्" कहिए ।उसी से एक से दो और फिर दो से अनेक युग्म बनते हैं और बढते चले जाते हैं । वैज्ञानिकों की खोज में बहत कुछ उपलब्ध कर लिया है और बहुत कुछ उपलब्ध करने के लिए शेष रह गया है ।

प्राण शक्ति और अन्तरिक्ष

[विद्युत् मास्तरश्मि, सौररश्मि.]

भारतीय दार्शनिकों के मतानुसार सारा जगत् दो पदार्थों से निर्मित है, उनमें से एक का नाम है अन्तरिक्ष और दूसरा प्राण। यह अन्तरिक्ष एक सर्वव्यापी सर्वानुस्यूत सत्ता है। जिस किसी वस्तु का आकार है, जो कोई वस्तु कुछ वस्तुओं के मिश्रण से बनी है, वह इस अन्तरिक्ष से ही उत्पन्न हुई है। यह आन्तरिक्ष की वायु में परिणत होता है यही तरल पदार्थ का रूप धारण करता है, यही पुन: ठोस पदार्थ का रूप धारण करता है। यह अन्तरिक्ष ही सूर्य, पृथ्वी, तारा धूमकेतु आदि में परिणत होता है। समस्त प्राणियों का शरीर- पशुओं के शरीर, उद्भिद आदि जितने रूप हमें देखने को मिलते हैं, जिन वस्तुओं को हम इन्द्रियों द्वारा अनुभव कर सकते हैं यहाँ तक कि संसार में जो कोई भी वस्तु है, सभी अन्तरिक्ष से उत्पन्न हुई है। यह अन्तरिक्ष इतना सूक्ष्म है कि यह जब स्थूल होकर कोई आकार धारण करता है तभी हम इसका अनुभव कर सकते हैं। सृष्टि के आदि में एकमात्र अन्तरिक्ष रहता है, फिर कल्प के अन्त में समस्त ठोस, तरल और बाष्पीय पदार्थ पुन: अन्तरिक्ष में लीन हो जाते हैं। बाद की सृष्टि फिर से इसी तरह अन्तरिक्ष से उत्पन्न होती है।[1]

अब प्रश्न उठता है कि किस शक्ति के प्रभाव से अन्तरिक्ष का जगत् के रूप में परिणाम होता है? इसका एक ही उत्तर है कि प्राण की शक्ति से। जिस प्रकार अन्तरिक्ष इस जगत् का कारणस्वरूप अनन्त, सर्वव्यापी, भौतिक पदार्थ है, प्राण भी उसी प्रकार जगत् की उत्पत्ति का कारणस्वरूप, सर्वव्यापी, विक्षेपकारी शक्ति है। कल्प के आदि में और अन्त में सम्पूर्ण सृष्टि अन्तरिक्ष रूप में परिणत होती है और जगत् की सारी शक्तियाँ प्राण में लीन हो जाती है। दूसरे कल्प में फिर उसी प्राण से समुदाय शक्तियों का विकास होता है। यह प्राण ही गतिरूप

1-विवेकानंद साहित्य-प्रथम खण्ड, तृतीय अध्याय

में अभिव्यक्त हुआ है और यही प्राण गुरुत्वाकर्षण या चुम्बकी शक्ति के रूप में अभिव्यक्त हो रहा है । यह प्राण ही स्नायविक शक्ति प्रवाह के रूप में विचार शक्ति के रूप में और समुदाय दैहिक क्रिया के रूप में अभिव्यक्त हुआ है । विचार शक्ति से लेकर अति सामान्य बाह्य शक्ति तक सब कुछ प्राण का ही विकास है । बाह्य और अन्तर्जगत की समस्त शक्तियाँ जब अपनी मूल अवस्था में पहुँचती हैं, जब उसी को प्राण कहते हैं ।

संसार में जितने प्रकार की शक्तियों का अब विकास हुआ, कल्प के अन्त में वे शान्त भाव धारण करती है, अव्यक्त अवस्था में लीन होती हैं, और दूसरे कल्प के आदि में वे फिर से व्यक्त होकर अन्तरिक्ष पर कार्य करती रहती हैं । इसी अन्तरिक्ष से परिदृश्यमान साकार वस्तुएँ उत्पन्न होती हैं और अन्तरिक्ष के विविध परिणाम प्राप्त होने पर यह प्राण भी दृश्यमान होकर नाना प्रकार की शक्तियों में परिणत होता रहता है । इस प्रकार प्रकृति में ये दो सत्तायें हैं- यह अन्तरिक्ष और दूसरी प्राण । अन्तरिक्ष पदार्थ है, अत्यन्त सूक्ष्म है और प्राण शक्ति है जो कुछ हम देखते सुनते हैं या अनुभव करते हैं- जैसे वायु, पृथ्वी या और भी जो कुछ- वे सब भौतिक पदार्थ हैं और इसी अन्तरिक्ष से उत्पन्न हुए हैं । यह अन्तरिक्ष प्राण की क्रिया से परिवर्तित होकर सूक्ष्म से सूक्ष्मतर या स्थूल से स्थूल तर बनता रहता है । अन्तरिक्ष के समान प्राण भी सर्वव्यापी है और सभी वस्तुओं में व्याप्त है । स्थूल शरीर अन्तरिक्ष से बना हुआ उपकरण है जिसके द्वारा प्राण स्थूल रूपों में - जैसे पेशियों के संचालन, चलने, बैठने, बोलने आदि में प्रकट होता है । सूक्ष्म शरीर भी अत्यन्त सूक्ष्म अन्तरिक्ष से बना है जिसके द्वारा वही प्राण विचार रूपी सूक्ष्म भाव में प्रकट होता है ।[1]

प्रकृति की दो क्रियायें हैं- क्रम विकास और क्रम संकोच (Evolution & Involution) । क्रम विकास में प्रकृति का क्रमशः विकास होता है जिसमें सूर्य, नक्षत्र, तारे तथा जीवन जन्तु, वनस्पति आदि उत्पन्न होते हैं और क्रम संकोच

1-विवेकानन्द साहित्य-प्रथम खण्ड, पृ० 231

में सम्पूर्ण सृष्टि अव्यक्त होकर सुप्त ऊर्जा अथवा मूल प्राणशक्ति में समाहित हो जाती है ।[1] वैज्ञानिकों का कहना है कि आकाश के नक्षत्रपिण्ड तथा सूक्ष्म परमाणु गुरुत्वाकर्षण तथा विद्युत् चुम्बकीय शक्ति के प्रभाव से टिके हुए हैं और उसी से गति प्रकाश, विकिरण, ऊर्जा आदि विभिन्न शक्तियाँ उत्पन्न होती हैं । दूसरे शब्दों में ब्रह्माण्ड की सभी शक्तियाँ मूल रूप से चुम्बकीय हैं । दूसरी ओर योगी कहते हैं कि प्रकृति की इन सभी शक्तियों का मूल स्रोत प्राण शक्ति ही है । यही शक्ति हमारे स्नायुतन्तुओं तथा विचार शक्तियों में भी विद्यमान है । उसी जीवनदायिनी शक्ति का जब लोप हो जाता है तब मनुष्य की मृत्यु हो जाती है । इससे स्पष्ट हो जाता है कि योगशास्त्र और वैज्ञानिक व्याख्या में कोई मूलभूत अन्तर नहीं है, क्योंकि दोनों ही एक ही मूलशक्ति में विश्वास करते हैं ।

पदार्थ एवं वस्तु को गतिशील बनाने के लिए प्राणशक्ति अथवा ऊर्जा का संचय आवश्यक है । विज्ञान प्राणशक्ति एवं ऊर्जा को ही केन्द्रीभूत कर किसी कण या वस्तु को गतिमान् करता है । उदाहरणार्थ- बिजली, भाप, गैस और ऊर्जा (solar energy) आदि को प्राण शक्ति ही कहा जायेगा । जिसको किसी यन्त्र द्वारा शोषण कर विज्ञान अपने प्रयोग में लाता है ।

इसी प्रकार संसार में अनेक प्रकार के कल-कारखाने तथा यन्त्र आदि चलते हैं । उसका कारण यह है कि हम वैज्ञानिक विधि द्वारा सर्वव्यापी प्राणशक्ति को ही खींचकर अथवा उसका संचय कर किसी विशेष वस्तु को गतिशील बना देते हैं । इस प्रकार प्राण और अन्तरिक्ष दोनों एक दूसरे से संबंधित हैं । अन्तरिक्ष की सहायता के बिना प्राण कार्य नहीं कर सकता । गति, स्पन्दन या विचार के रूप में हम जो जानते हैं वे प्राण के ही विकास हैं और जड़ और भूत पदार्थ रूप में हम जो देखते हैं और आकृतिमान् है वह अन्तरिक्ष का विकास है। वह प्राण स्वयं नहीं कर सकता अथवा किसी मध्यवर्ती के बिना कार्य नहीं कर सकता । जब यह केवल शुद्ध प्राण ही है वह अन्तरिक्ष में रहता है और प्रकृति की शक्ति गुरुत्वाकर्षण के लिए वह पदार्थ

1-पातंजलि योगसूत्र का विवेचनात्मक और तुलनात्मक अध्ययन-डा० नलिनी शुक्ला

आवश्यक है । हम लोगो ने कभी जड़ पदार्थ के बिना शक्ति या शक्ति के बिना जड़ पदार्थ नहीं देखा है । हम जिन्हें शक्ति और पदार्थ कहतें हैं- वे उन वस्तुओं की स्थूल अभिव्यक्तियां हैं जिनके सूक्ष्म स्वरूप को प्राण एवं अन्तरिक्ष कहते हैं । प्राण को हम जीवन या जीवनशक्ति कह सकते हैं । लेकिन तब इसे मनुष्य जीवन तक ही सीमित नहीं करना चाहिए । साथ ही इसे आत्मा के साथ भी एकीकृत करना चाहिए ।[1]

इस प्रकार यह सृष्टिक्रम चलता रहता है । सृष्टि का कोई न आदि है और न ही अन्त - यह एक चिरन्तन प्रवाह है ।

1-विवेकानन्द साहित्य, चतुर्थ खण्ड, पृ० 194

ग्रहों में प्राण की सत्ता

वैज्ञानिक गणना के अनुसार पृथ्वी की आयु पाँच-छः अरब वर्ष है । संभवतः इसकी उत्पत्ति ऊष्ण कॉस्मिक धूल व गैसों के एक जलते हुए लाल पिण्ड से हुई जो उस समय ब्रह्माण्ड में तीव्र गति से चक्कर लगा रहा था । इसी पिण्ड के कई भागों में बँट जाने से ग्रहों की उत्पत्ति हुई । इन ग्रहों में से पृथ्वी भी एक है । स्पष्ट है कि प्रारंभिक पृथ्वी एक ज्वलित बाष्प पुंज के गोले के रूप में थी जिनमें हाइड्रोजन व अन्य तत्वों के परमाणु स्वतंत्र अवस्था में विद्यमान थे । लाखों करोड़ो वर्षों में जैसे-जैसे पृथ्वी ठण्डी होती गई वैसे वैसे विभिन्न गैसों व तत्वों ने अपने घनत्व के अनुसार अलग अलग स्तर बना लिये । लोहा निकिल व ताँबा जैसे भारी तत्व इस गोले के केन्द्र में पहुँच गये और इन्होंने भूकोड (Core) बना लिया । एल्यूमिनियम व सिलिकॉन जैसे हल्के तत्व मध्यभाग में इकट्ठे हो गये तथा हाइड्रोजन, आक्सीजन नाइट्रोजन व कार्बन आदि बाह्य सतह पर तैरने लगे और इन्होंने आदि कालीन पृथ्वी का वायुमण्डल बनाया । प्रारंभ में पृथ्वी का ताप इतना अधिक था कि विभिन्न तत्वों के परमाणु मुक्त अवस्थामें थे । ताप में कमी होने पर परमाणुओं के संयोग से अणुओं का निर्माण हुआ । अधिक क्रियाशील होने के कारण आक्सीजन के सभी उपलब्ध अणुओं के कार्बन, हाइड्रोजन व नाइट्रोजन के साथ संयोग कर लिया फलस्वरूप प्रारंभिक वायुमण्डल में आक्सीजन मुक्त अवस्था में नहीं थी, अतः आदि वायुमण्डल अपचायक (Reducing) था ।

आदिकालीन पृथ्वी का तापमान 50,000-60,000 डिग्री से० के बीच था । उस समय इसकी धरातलीय गैस में कार्बन नाइट्रोजन आक्सीजन व हाइड्रोजन प्रचुर मात्रा में थे इनके परस्पर संयोग से जल, मीथेनजैसे प्रारम्भिक यौगिक बने परन्तु तापमान अधिक होने के कारण ये सब गैसों के रूप में वायुमण्डल मे रहे साथ ही पृथ्वी पर लोहे और निकल आदि ने इन गैसों के साथ संयोग करके नाइट्रोजन व कार्बाइड बनाये ।

समय के साथ साथ पृथ्वी का ताप भी कम होता चला गया और कुछ गैसों ने तरल का रूप ले लिया । इनमें से कुछ तरल ठोस पदार्थ के रूप में बदल गये । वायुमण्डल में भरे मीलों गहरे बादल जल के रूप में पृथ्वी पर बरस पड़े । वर्षा का पानी जैसे ही धधकती हुई पृथ्वी के गीले के सम्पर्क में आया, तुरन्त वाष्प के रूप में पुनः वायुमण्डल में जा मिला और यही क्रम लाखो वर्षों तक चलता रहा धीरे धीरे पृथ्वी की सतह ठण्डी होती गई और वर्षा के पानी को रोकने की सामर्थ्य आ गई वर्षा के पानी में घुलकर वायुमण्डल की अमनोनिया व मीथेन भी समुद्र के पानी में एकत्रित हो गये ।

मीथेन एक सक्रिय यौगिक है । जीवोत्पत्ति के इतिहास में सबसे अधिक महत्व इसी का रहा । पृथ्वी के ठण्डा होने का क्रम जारी रहा और ताप कम होने पर मीथेन के अणुओं के ऐथेन (Ethane) प्रोपेन (Propane) ब्यूटेन (Butane) आदि संतृप्त बहुलक (Polymer) हाइड्रोकार्बन्स का निर्माण हुआ , जिन्होंने अतितप्त एल्कोहल आदि तथा उनके आक्सी व हाइड्रोक्सी यौगिक बनाये ।

सरल कार्बनिक अणुओं के संघनन, बहुलीकरण आक्सीकरण एवं अपचयन से और अमोनिया व जल के साथ क्रिया करने से अधिक जटिल कार्बनिक यौगिक बने । सूर्य के प्रकाश तथा बादलों में बिजली की तड़ित से इन्हें ऊर्जा प्राप्त हुई । चारों ओर घनघोर बादल छाये रहते थे जिन्हें बेधकर सूर्य का प्रकाश पृथ्वी तक कठिनता से आ पाता था, तथापि पराबैगनी (ultra-violet) तथा एक्स-रे (x-ray) व प्रबल ऊर्जा वाले अन्य विकिरण बादलों को पार करके पृथ्वी पर पहुँच जाते थे । बिजली की तड़ित् रासायनिक क्रियाओं के लिए ऊर्जा का एक स्रोत थी, बिजली के चमकने पर वायुमण्डल में परमाणुओं के बीच रासायनिक क्रिया होती है और अमोनिया अमोनिया आदि यौगिक बनते हैं जैसे- शर्करायें (Sugars) बसा, अम्ल, एमिनो, एसिड, पिरामिडोन्स तथा प्यूरीन्स आदि इसके संयोगों से पोलीसेकराइडस कार्बोहाइड्रेटस बसा, प्रोटीनस न्यूक्लिओसाइड्स व न्यूक्लिओटाइड्स जैसे और अधिक जटिल आधुनिक यौगिक बन गये । सैकडो हजारों न्यूक्लिओटाइडस के क्रम

में जुड़ने से अत्यन्त जटिल प्रकार के अणुओं का निर्माण हुआ जिन्हें न्यूक्लीक अम्ल (Nucleic Acids) कहते हैं । इनके निर्माण के बाद में जीवोत्पत्ति को एक साकार रूप दिया ।

इस प्रकार से हम देखते हैं कि सर्वप्रथम अकार्बनिक पदार्थों के संयोग से अमोनिया, मीथेन व जल जैसे साधारण अणु बने । वे वर्षा के जल में घुलकर समुद्र में एकत्रित होते रहे । इनमें रासायनिक क्रियाओं के फलस्वरूप पोलीसैकेराइडस, वसा अम्ल ऐमीनो अम्ल आदि बने । इससे प्रोटीन व न्यूक्लीक अम्ल जैसे जटिल अम्लों का निर्माण हुआ । प्रोटीन तथा न्यूक्लीक अम्लजैसे जटिल अम्लों का निर्माण हुआ। प्रोटीन तथा न्यूक्लीन अम्लों से न्यूक्लिओप्रोटीन्स बने । न्यूक्लियो प्रोटीन्स के विभिन्न प्रकार के समूहों में एकत्रित होने से जीन्स केन्द्रक तथा प्रारंभिक कोशिकाओं का जन्म हुआ । प्रारंभिक कोशिकाओं में उत्परिवर्तन तथा उद्‌विकास से भांति भांति के पेड़ पौधों व जीव जन्तुओं की उत्पत्ति हुई । उद्‌विकास एवं उत्परिवर्तन की क्रियायें अभी भी जारी हैं और तब तक होतीरहेंगी जब तक कि जीवन ही नष्ट न हो जाये ।

पृथ्वी पर जीवन की उद्‌भव की आधुनिक परिकल्पना के आधार पर कहाजा सकता है कि सौर मण्डल (Solar System) में उन ग्रहों की संभावना है जहां पर कभी भी वही स्थितियां बनी हुई हैं जो जीवन के उद्‌भव के समय पृथ्वी पर थीं । मंगल (Mars) ग्रह ही एक मात्र ऐसा ग्रह है जिस पर जीवन या प्राण के अस्तित्व की संभावना है । दिन के समय यहां कि ताप 30-30 से0ग्रे0 रहता है । इसका वायुमण्डल नाइट्रोजन, कार्बन, हाइड्रोक्साइड तथा वाष्प का बनाहुआ है । इसके वायुमण्डल में प्रातः बादल देखे गये हैं । खगोलज्ञों ने इसके रंग में मौसमी परिवर्तन भी देखे हैं । बसन्त ऋतु में क्लोरोफिल युक्त वनस्पति के कारण इसका रंग नीला हरा होता है जबकि शरद ऋतु में वनस्पति के लुप्त हो जाने से यह पीला या भूरा दिखाई देता है किन्तु रूस द्वारा भेजे गये वाइकिंग (Viking) (viking) । व 2 अन्तरिक्ष यानों द्वारा किये गये जैविक, प्रयोगों से भी अभी तक

मंगल ग्रह पर प्राण के अस्तित्त्व के संबंध में उपयुक्त प्रमाण नहीं मिल पाये हैं। अमेरिका द्वारा भेजे गये अन्तरिक्ष यान मेरिनर -9 (Mariner 9) द्वारा भेजेगये चित्रों से शुक्र पर प्राण के अस्तित्व की संभावना है। रूस के जार्जी गोलिस्टिन Georgy Golistene ने शुक्र ग्रह पर आंधी और तूफानों की पुष्टि की है।

अपने सौर मण्डल के अतिरिक्त ब्रह्माण्ड में लाखो ऐसे सितारे हैं जहां का वायुमण्डल जीवन की उत्पत्ति के लिए उपयुक्त हो सकता है यदि यह सही है तो निश्चय ही जीवन का उद्भव हमारी पृथ्वी के अतिरिक्त अन्यग्रहों पर भी हुआ होगा। इसकी भी संभावना है कि इनमें से कुछ ग्रहों पर जीवन पृथ्वी से कहीं अधिक विकसित हो। अन्य ग्रहों पर जीवन का उद्भव एवं उपस्थित का अन्वेषण आज कल की सबसे आश्चर्यजनक घटना होगा। अब वह दिन दूर नहीं जब मनुष्य अन्तरिक्ष यात्रा द्वारा मंगल व शुक्र ग्रहों पर उपस्थित जीवन के बारे में पूरी जानकारी प्राप्त कर सकेगा।

1-जन्तुविज्ञान-वीर बाला रस्तोगी